ISSN 2395-051X

नैतिक मूल्य और वर्तमान शिक्षा

डॉ. रश्मि मलैया
सह प्राध्यापक - गृह विज्ञान
शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

शिक्षा मनुष्य के सम्यक् विकास के लिए उसके विभिन्न ज्ञान तंतुओ को प्रशिक्षित करने की प्रक्रिया है। इसके द्वारा लोगों में आत्मसात करने, ग्रहण करने, रचनात्मक कार्य करने, दूसरों की सहायता करने और राष्ट्रीय महत्व के कार्यक्रमों में पूर्ण सहयोग देने की भावना का विकास होता है। इसका उद्देश्य व्यक्ति को परिपक्व बनाना है।

नीति शास्त्र की उक्ति है - ''ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः।'' अर्थात् ज्ञान से हीन मनुष्य पशु के तुल्य है। ज्ञान की प्राप्ति शिक्षा या विद्या से होती है। दोनों शब्द पर्यायवाची हैं। 'शिक्ष' धातु से शिक्षा शब्द बना है, जिसका अर्थ है - विद्या ग्रहण करना। विद्या शब्द 'विद' धातु से बना है, जिसका अर्थ है-ज्ञान पाना। ऋषियों की दृष्टि में विद्या वही है जो हमें अज्ञान के बंधन से मुक्त कर दे - 'सा विद्या सा विमुक्तये'। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में 'अध्यात्म विद्यानाम्' कहकर इसी सिद्धांत का समर्थन किया है।

शिक्षा की प्रक्रिया युग सापेक्ष होती है। युग की गति और उसके नए-नए परिवर्तनों के आधार पर प्रत्येक युग में शिक्षा की परिभाषा और उद्देश्य के साथ ही उसका स्वरूप भी बदल जाता है। यह मानव इतिहास की सच्चा है। मानव के विकास के लिए खुलते नित-नये आयाम शिक्षा और शिक्षाविदों के लिए चुनौती का कार्य करते है जिसके अनुरूप ही शिक्षा की नयी परिवलतत-परिवलधत रूप-रेखा की आवश्यकता होती है। शिक्षा की एक बहुत बड़ी भूमिका यह भी है कि वह अपनी संस्कृति, धर्म तथा अपने इतिहास को अक्षुण्ण बनाए रखें, जिससे की राष्ट्र का गौरवशाली अतीत भावी पीढ़ी के समक्ष द्योतित हो सके और युवा पीढ़ी अपने अतीत से कटकर न रह जाए।

वर्तमान समय में शिक्षक को चाहिए कि सामाजिक परिवर्तन को देखते हुए उच्च शिक्षा में गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए केवल अक्षर एवं पुस्तक ज्ञान का माध्यम न बनाकर शिक्षित को केवल भौतिक उत्पादन-वितरण का साधन न बनाया जाए अपितु नैतिक मूल्यों से अनुप्राणित कर आत्मसंयम, इंद्रियनिग्रह, प्रलोभनोपेक्षा, तथा नैतिक मूल्यों का केंद्र बनाकर भारतीय समाज, अंतरराष्ट्रीय जगत की सुख-शान्ति और समृध्दि को माध्यम तथा साधन बनाया जाय। ऐसी शिक्षा निश्चित ही 'स्वर्ग लोके च कामधुग् भवति।' कामधेनु बनकर सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाली और सुख-समृध्दि तथा शान्ति का संचार करने वाली होगी।

वर्तमान शिक्षा में नैतिक मूल्यों का महती आवश्यकता है। वैदिक शिक्षा प्रणाली का मानना है कि समस्त ज्ञान मनुष्य के अंतर में स्थित है। भारतीय मनोविज्ञान के अनुसार आत्मा ज्ञान रूप है ज्ञान आत्मा का प्रकाश है। मनुष्य को बाहर से ज्ञान प्राप्त नहीं होता प्रत्युत आत्मा के अनावरण से ही ज्ञान का प्रकटीकरण होता है। श्री अरविन्द के शब्दों में ''मस्तिष्क को ऐसा कुछ नहीं सिखाया जा सकता जो जीव की आत्मा में सुप्त ज्ञान

के रूप में पहले से ही गुप्त न हो।' स्वामी विवेकानंद ने भी इसी बात को इन शब्दों में व्यक्त किया है - "मनुष्य की अंतरनिहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है। ज्ञान मनुष्य में स्वभाव सिद्ध है कोई भी ज्ञान बाहर से नहीं आता सब अंदर ही है हम जो कहते है कि मनुष्य 'जानता' है। यथार्थ में मानव शास्त्री गत भाषा में हमें कहना चाहिए की वह अविष्कार करता है, अनावृत ज्ञान को प्रकट करता है।

अतः समस्त ज्ञान चाहे वह भौतिक हो, नैतिक हो अथवा आध्यात्मिक मनुष्य की आत्मा में है। बहुधा वह प्रकाशित न होकर ढका रहता है और जब आवरण धीरे-धीरे हट जाता है तब हम कहते है कि हम सीख रहे है जैसे-जैसे इस अनावरण की क्रिया बढ़ती जाती है हमारे ज्ञान में वृद्धि होती जाती है। इस प्रकार शिक्षा का उद्देश्य नए सिरे से कुछ निर्माण करना नहीं अपितु मनुष्य में पहले से ही सुप्त शक्तियों का अनावरण और उसका विकास करना है।

चारित्रिक एवं नैतिक शिक्षा पर बल देते हुए स्वामी विवेकानंद ने कहा था – 'शिक्षा मनुष्य के भीतर निहित पूर्णता का विकास है वह शिक्षा जो जनसमुदाय को जीवन संग्राम के उपयुक्त नहीं बना सकती, जो उनकी चारित्रिक शक्ति का विकास नहीं कर सकती, जो उनके मन में परहित भावना और सिंह के समान साहस पैदा नहीं कर सकती, क्या उसे भी हम शिक्षा नाम दे सकते है?' शिक्षा का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा था -'सभी शिक्षाओं का, अभ्यासों का अंतिम ध्येय मनुष्य का विकास करना है। जिस अभ्यास के द्वारा मनुष्य की इच्छा शक्ति का प्रवाह और आविष्कार संयमित होकर फलदायी बन सकें।'

शिक्षार्थी के जीवन में नैतिक मूल्य परक उच्च शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि नैतिक मूल्यों वाली उच्च शिक्षा लोगों को एक अवसर प्रदान करती है जिससे वे मानवता के सामने आज सोचनीय रूप से उपस्थित सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक मसलों पर सोच-विचार कर सकें। अपने विशिष्ट ज्ञान और कौशल के प्रसार द्वारा उच्च शिक्षा राष्ट्रीय विकास में योगदान करती है। इस कारण हमारे अस्तित्व के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण है।

उच्च शिक्षा के संदर्भ में गुणवत्ता की महत्ता का विश्लेषण करते हुए "उच्च शिक्षा का संबंध जीवन में गुणात्मक मूल्यों के विस्तार से है जिससे सभ्यता के विकास क्रम में अलजत मानवता के दीर्घकालिक अनुभवों को आत्मलब्धि की दिशा में समाजीकरण के साथ अग्रसारित किया जा सके। ऐसे अनुभवों के समुच्चय ही कालान्तर में मूल्य बनते हैं जिन्हें अपनाने की परम्परा ही संक्षेप में संस्कृति कहलाती है और इस संस्कृति के निर्माण में एक शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका है। आज के बदलते सामाजिक परिवेश में शिक्षा, शिक्षा के प्रकार और शिक्षा प्राप्त करने के तरीकों में परिवर्तन आए है, जिसमें शिक्षक की भूमिका में भी बदलाव आया है, एक अच्छे शिक्षक के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए महाकवि कालिदास ने कहा है कि श्रेष्ठ शिक्षक वही है जिसकी अपने विषय में गहरी पैठ हो। उसका अपने विषय पर तो अधिकार होना ही चाहिए, अध्यापन क्षमता भी उत्कृष्ट कोटि की होनी चाहिए, जिससे छात्रों को श्रेष्ठ ज्ञान लाभ मिल सके।

नैतिक मूल्य मनुष्यता की पहचान हैं -

असंतोष, अलगाव, उपद्रव, आंदोलन, असमानता, असामंजस्य, अराजकता, आदर्श विहीनता, अन्याय, अत्याचार, अपमान, असफलता अवसाद, अस्थिरता, अनिश्चितता, संघर्ष, हिंसा यही सब घेरे हुए है आज हमारे जीवन को। व्यक्ति में एवं समाज में साम्प्रदायिकता, जातीयता, भाषावाद, क्षेत्रीयतावाद, हिंसा की संकीर्ण कुत्सित भावनाओं व समस्याओं के मूल में उत्तरदायी कारण है मनुष्य का नैतिक और चारित्रिक पतन अर्थात नैतिक मूल्यों का क्षय एवं अवमूल्यने।

ISSN 2395-051X

नैतिकता का सम्बंध मानवीय अभिवृत्ति से है, इसलिए शिक्षा से इसका महत्त्वपूर्ण अभिन्न व अटूट सम्बंध है। कौशलों व दक्षताओं की अपेक्षा अभिवृत्ति-मूलक प्रवृत्तियों के विकास में पर्यावरणीय घटकों का विशेष योगदान होता है। यदि बच्चों के परिवेश में नैतिकता के तत्त्व पर्याप्त रूप से उपलब्ध नहीं हैं तो परिवेश में जिन तत्त्वों की प्रधानता होगी वे जीवन का अंश बन जायेंगे। इसीलिए कहा जाता है कि मूल्य पढ़ाये नहीं जाते, अधिग्रहीत किये जाते हैं।

देश की सबसे बड़ी शैक्षिक संस्था-राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद के द्वारा उन मूल्यों की एक सूची तैयार की गयी है जो व्यक्ति में नैतिक मूल्यों के परिचायक हो सकते हैं। इस सूची में 84 मूल्यों को सम्मिलित किया गया है।

वास्तव में, नैतिक गुणों की एक पूर्ण सूची तैयार नहीं की जा सकती, तथापि संक्षेप में हम इतना कह सकते हैं कि हम उन गुणों को नैतिक कह सकते हैं जो व्यक्ति के स्वयं के, सर्वांगीण विकास और कल्याण में योगदान देने के साथ-साथ किसी अन्य के विकास और कल्याण में किसी प्रकार की बाधा न पहुंचाए। विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि नैतिक मूल्यों की जननी नैतिकता सद्गुणों का समन्वय मात्र नहीं है, अपितु यह एक व्यापक गुण है जिसका प्रभाव मनुष्य के समस्त क्रिया-कलापों पर होता है और सम्पूर्ण व्यक्तित्व इससे प्रभावित होता है। वास्तव में नैतिक मूल्य/नैतिकता आचरण की संहिता है हमें इस बात को भली भांति समझना होगा कि नैतिक मूल्य नितांत वैयक्तिक होते हैं। अपने प्रस्फुटन उन्नयन व क्रियान्वय से यह क्रमशः अंतयक्तिक/सामाजिक व सार्वभौमिक होते जाते हैं।

एक ही समाज में विभिन्न कालों में नैतिक संहिता भी बदल जाती है। नैतिकता/नैतिक मूल्य वास्तव में ऐसी सामाजिक अवधारणा है जिसका मूल्यांकन किया जा सकता है। यह कर्तव्य की आंतरिक भावना है और उन आचरण के प्रतिमानों का समन्वित रूप है जिसके आधार पर सत्य असत्य, अच्छा-बुरा, उचित-अनुचित का निर्णय किया जा सकता है और यह विवेक के बल से संचालित होती है।

आधुनिक जीवन में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, महत्त्व अनिवार्यता व अपरिहार्यता को इस बात से सरलता व संक्षिप्ता में समझा जा सकता है कि संसारके दार्शनिकों, समाजशात्रियों, मनोवैज्ञानिकों शिक्षा शात्रियों, नीति शात्रियों ने नैतिकता को मानव के लिए एक आवश्यक गुण माना है।

गिरता नैतिक मूल्य

क्यों आज हमारी युवा पीढ़ी खोती जा रही है अपने नैतिक मूल्य?इस विषय पर अक्सर बहुत बार चर्चा सुनने को मिलती है, टी वी न्यूज़ चैनल्स के माध्यम से औरसमाचार पत्रें के माध्यम से। अगर हम अपने परिवार को लेकर आगे बढें, अपने आस पड़ोस को लेकर आगे बढ़ें तो हम भी इस बात से जरूर इतेफाक रखेंगे कि आज कीजो हमारी युवा पीढ़ी है और जो युवा पीढ़ी आ रही है, उसमे जरूर कही न कहीं नैतिक मूल्यों की कमी नजर आती है, जैसे नैतिक मूल्य हमारे पूर्वजों के थे, हमारे माता पिता के थे। ये जो आज की पीढ़ी है जिसमे मैं भी आता हूँ जरूरकही न कही हम अपना नैतिक मूल्य खोते जा रहे है और ये दर नित प्रतिदिन वढतीजा रही है। जो संस्कार हमारे पूर्वजों के थे वो संस्कार हम अपनी नई पीढ़ी को देने में कामयाब नही हो पा रहे है और मेरी नजर में इसके दोषी भी हमखुद है, हमारा परिवार है, हमारे माँ बाप है। अगर मैं अपनी उम्र की युवा पीढ़ी को उदाहरण के तौर पर लेकर आगे बड़ों तो बचपन मैं दादा-दादियों द्वारा हमको अच्छी अच्छी कहानियाँ सुनने को मिलती थी। कहते है कि जव बच्चा छोटा होता है तो उस समय उसका मस्तिष्क बिल्कुल

शून्य होता है, आप उसको जैसे संस्कार और शिक्षा देंगे वो उसी राह पर आगे बढता है। अगर बाल्यकाल में बच्चे को ये शिक्षा दी जाती है कि बेटा चोरी करना बुरा कामहै तो वो चोरी करने से पहले सो बार सोचेगा, क्योंकि उसको शिक्षा मिली हुई है कि चोरी करना बुरी बात है। बाल्यकाल में बच्चे को संस्कारित करने मेंघर के बुजुर्गों का, माता पिता का बहुत बड़ा हाथ होता है। जैसे मैंने कहाकि जब छोटे थे और गाँव के बुजुर्ग दादा-दादियों की संगत में कुछ पल व्यतीतकरते थे, तो वो हमको बहुत कुछ अच्छी अच्छी कहानियाँ सुनाया करते थे जिसका कुछ न कुछ प्रभाव हमारे मन मस्तिष्क पर पड़ता था, उनमे से कुछ कहानिया प्रेरणादायी होती थी, कुछ परोपकारी होती थी, कुछ जीवों पर दया करने वाली होती थी, कुछ देवी देविताँ की होती थी और कुछ क्षेत्रीय कहानिया होती थी और सबका उद्देश्य हमारे अन्दर अच्छे संस्कारों को डालने का होता था और जो कि हमें संस्कारित बनाए रखने में आज भी बहुत मदद करते है। आज भी यदि हमारेकदम अपने पथ से विचलित होने का प्रयास करते है तो वो पुरानी कही हुई बातें याद आज जाती है और जो हमें फ़िर से सही पथ पर ले जाने का प्रयास करती है। मैंने किसी प्रत्रिका मैं पढ़ा था कि किसी ५ साल के बच्चे से किसी सम्मानीय व्यक्ति ने दुर्गा माँ की फोटो की ओर इशारा करते हुए पूछा बेटा ये कोन है तो बच्चे का जवाब था लोयन वाली औरत, जो इस लोयन के ऊपर बैठी है, किसी दूसरे सम्मानीय व्यक्ति ने गणेश भगवान् के बारे में पूछा तो बच्चा गणेश Elephannt God संबोधित करते हुए पाया गया। अब बताओ इसमे उस बच्चे काकसूर ही क्या है?जब कभी भी उस परिवार के सदस्य ने उसको ये बताने की कोशिश नही की कि बेटा ये दुर्गा माता है जिनका वहां शेर है या ये गणेश भगवान् जी है जिनका मुह हाथी की सूंड जैसा होता है तो उसको कैसे पता चलता? जब हम छोटे थे तो हमारे पास एक नैतिक शिक्षा की किताब होती थी जिनमे कि बहुतअच्छी अच्छी कहानिया होती थी जिनको पड़कर बहुत आनंद आता था और एक बार मनमें उन जैसा बनने की तीव्र इच्छा होती थी, लेकिन शायद आजकल उस नैतिकशिक्षा की किताब का अर्थ ही बदल गया है, उसका कोई महत्व ही नही रह गया है। मुझे तो लग रहा है कि शायद आज वो नैतिक शिक्षा की किताब स्कूलों से गायबभी हो चुकी होगी। आज आपके घरों में दुनिया भर की कोमिक्स का ढेरमिल जाएगा, कंप्यूटर गेम्स की दुनिया भर की सी डी मिल जाएँगी, फिल्मीगानों की दुनिया भर की कैसेट आपके बच्चे के कमरे में मिल जायेगी लेकिन सरदार भगत सिंह, महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानंद आदि मनीषियों की प्रेरणाश्रोत कहानियो की किताब आपके बच्चे के स्कूल बैग से नदारद मिलेगी और यहाँ तक कि आप भी ये कोशिश कभी नही करेंगे कि आप अपने बच्चे को ऐसी किताबें खरीद कर लायें। पहले यदि हमारे माँ बाप ऐसी किताबें नही भी खरीदा करते थेतो इसकी कमी हमारे दादा-दादी और बुजुर्ग पूरा कर देते थे, लेकिन आज हमारे बुजुर्गों की क्या स्थिति है ये हम सब लोग जानते है। आज हर माँ बाप की ये कोशिश रहती है कि उनके बच्चे उनके दादा-दादी से दूर रहे, यदि कभी दादा दादी ने बच्चे को डांटने की हिमाकत भी कर ली तो उल्टा उनको उसकी कीमत भी चुकानी पड़ती है। शायद ही अब किसी बच्चे को वो दादा दादी की कहानियाँ सुनने को मिलती होंगी, वो लोरी वो गीत सुनने को मिलते होंगे और शायद न ही कोई माँ बाप के पास इतना समय है कि वो अपने बच्चे को संस्कारित होने के संस्कार दे सकें. आज महात्मा गांधी, भगत सिंह, विवेकनन्द, लाल बहादुरशास्त्री केवल या तो उनके जन्म दिवस के मौके पर ही याद किए जाते है या उनके निर्वाण दिवस पर, आज वो हमारे घरों से नदारद है, हमारे दादा-दादियों की कहानियो से नदारद है, हमारे माँ बाप की जुबान से बहुत दूर है, हमारेआस से दूर है और हमारे पड़ोस से दूर है। तो कैसे हम ये आशा कर सकते है किहमारे बच्चों से अच्छे संस्कार आयें? अच्छे संस्कार देने के लिए हमारे पासतो समय नही है, जो

उनको अच्छे संस्कार दे सकते थे उनको तो उपेक्षित किया जाता है, जिन पुस्तकों को पढने से उनको संस्कारित किया जा सकता है उनकास्थान कोमिक्स, खिलोने और कोम्प्टर गेम्स ने ले लिया है, तो कैसे हम ये आशकर सकते है। इसके बारे में हमको खुद सोचना चाहिए क्योंकि कल हमेंभी किसी का माँ / बाप और दादा/दादी बनना है। हम ये निश्चय करते है किहमारी संतान किस दिशा में जा रही है और हम उनको क्या संस्कार दे रहे है। इसका और कोई जिम्मेदार नही है, केवल हम ही है।

सन्दर्भ

1. कल्याण 'शिक्षांक' सम्पादक- राधेश्याम खेमका, गीताप्रेस, गोरखपुर, वर्ष 1988
2. राष्ट्रीय शिक्षा-नीतिएक विहंगावलोकन- श्री मुरारीलाल शर्मा, पृष्ठ- 361
3. प्राचीन-अर्वाचीन भारतीय शिक्षा-पध्दति का तुलनात्मक अध्ययन- श्री नन्दनन्दनानन्द सरस्वती, पृष्ठ-80
4. शक्षा के भारतीय मनोवैज्ञानिक आधार – श्री लज्जाराम जी तोमर – पृष्ठ 236
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986
6. उच्च शिक्षा में गुणवत्ता प्रबंधन पुस्तक से, बसंत प्रताप सिंह (प्रमुख सचिव) उच्च शिक्षा विभाग, पृष्ठ-5